मुगल-ए-आज़म

के. आसिफ

के. आसिफ को भगवान ने 'मुग़ल-ए-आज़म' बनाने के लिए ही पैदा किया

उन्होंने महज 22 साल की उम्र में यानी साल 1944 में 'मुग़ल-ए-आज़म' बनानी शुरू कर दी थी। जब ये फिल्म बनकर रिलीज हुई तो के. आसिफ की उम्र 38 साल हो गई थी। इस दौरान उन्होंने किसी दूसरी फिल्म में काम नहीं किया। करीब 16 साल से ज्यादा समय तक वो इसी फिल्म पर काम करते रहे। उन्हें बहुत से लोग 'सनकी' कहा करते थे। लोगों को लगता था कि इतने दिनों तक किसी एक फिल्म को लेकर बैठे रहने वाला शख्स सनकी नहीं है तो और क्या है। लेकिन इस सनकी आदमी ने जो कमाल एक फिल्म बनाकर कर दिया, लोग सैकड़ों फिल्म बनाकर नहीं कर पाए। आज तक के हिन्दी सिनेमा के इतिहास की 'मुगले आजम' सबसे बड़ी फिल्म है।

शुरू में मुगले आजम नहीं था फिल्म का नाम, अनारकली के नाम से बनी थी फिल्म

बात है 1943-44 की, हुआ यूं कि इम्तियाज अली 'ताज' ने 1920 में एक ड्रामा 'अनारकली' के नाम से लिखा। जब बंबई में इसका मंचन हुआ तो के.आसिफ को इसने बड़ा प्रभावित किया। के.

आसिफ ने इम्तियाज अली ताज से मुलाकात की और उन से कहा कि मैं इस ड्रामे पर फिल्म बनाना चाहता हूं। उस जमाने में 'अमौस सिने लेबोरेट्रीज' के मालिक सेठ शिराज़ अली हाकिम, फिल्म के निर्माण के लिए तैयार हो गए। फिल्म का नाम 'अनारकली' रखा गया।

के. आसिफ ने शहजादा सलीम के किरदार के लिए अदाकार सप्रू को, अनारकली के लिए नरगिस को, अकबर बादशाह के लिए चंद्र मोहन और जोधा बाई के किरदार के लिए दुर्गा खोटे का इंतेखाब किया। ये सारा काम 1944 से 1947 तक होता रहा। कुछ फिल्म (लगभग 10 रील) बन भी चुकी थी लेकिन चंद्र मोहन की मृत्यु और विभाजन के बाद शिराज़ अली हाकिम के पाकिस्तान चले जाने पर फिल्म का काम खत्म हो गया।

इस बीच के. आसिफ की एक फिल्म 'हलचल' (1951) की रिलीज के बाद के. आसिफ ने अपनी बंद पड़ी अनारकली पर फिर काम करने के लिए कमर बांधी। इस बार इसका नाम अनारकली के बजाय 'मुग़ल-ए-आज़म' रखा। चंद्र मोहन दुनिया से जा चुके थे इसलिए अब अकबर के रोल के लिए पृथ्वीराज कपूर और शहजादा सलीम के लिए दिलीप कुमार को कास्ट कर लिया। इसके साथ ही शकील बदायुंनी और नौशाद का चुनाव भी हो गया। कहानी लिखने की जिम्मेदारी वजाहत मिर्ज़ा को सौंपी गई डायलॉग लिखने के लिए उनके साथ अहसान रिज़वी अमान (जीनत अमान के पिता) को ले लिया गया। फिल्म के शुरू की कमेंट्री 'मैं हिंदुस्तान हूं...' भी अमान की आवाज में है, लेकिन हिरोइन के नाम पर कहानी में एक मोड़ आ गया। इसे जानने के लिए आइए एक किताब के पन्ने पलटते हैं। टी.जे.एस. जॉर्ज ने 'दस्ताने-नरगिस' में लिखा है कि राजकपूर ने फिल्म 'अंदाज़' के बाद नरगिस को दिलीप कुमार के साथ काम करने से रोकने की हर संभव कोशिश की और कामयाब भी रहे।

अनारकली के रोल के लिए मधुबाला नहीं थीं पहली पसंद

फिल्म 'मुग़ल-ए-आज़म' की दस रीलें तैयार हो चुकी थीं। के. आसिफ नरगिस को ही अनारकली के रोल में रखना चाहते थे लेकिन राजकपूर बीच में कूद पड़े और नरगिस को फिल्म की कास्ट से बहार निकालने में कामयाब हो गए। जॉर्ज के मुताबिक, राजकपूर किसी दूसरे के साथ नरगिस के रोमांस के सीन बर्दाश्त नहीं कर सकते थे। नरगिस को भी इसका अंदाजा था क्योंकि नरगिस ने अपने एक इंटरव्यू में बताया कि मि. राजकपूर को मेरा किसी और के साथ तेजी के साथ मकबूल होने वाली जोड़ी बनाने का खयाल पसंद नहीं था।

कहा तो ये भी जाता है कि दिलीप कुमार ‘गंगा-जमना’ में नरगिस को लेना चाहते थे, लेकिन ऐसा न हो सका। 'मुग़ल-ए-आज़म' के नए निर्माता शापूर जी पलूंजी ने 'मुग़ल-ए-आज़म' पर पानी की तरह दौलत बहाई, मोहन स्टूडियो में शानदार सेट लगाये गए। मुगल दौर को दर्शाने वाली सारी चीजें इकट्ठा कर दी गईं।

अनारकली के लिए मधुबाला को चुन लिया गया और आखिरकार 16 वर्षों की मेहनत के बाद 5 अगस्त 1960 को ये फिल्म पूरे हिंदुस्तान में रिलीज हुई और हिन्दुस्तान की अब तक की सबसे बड़ी फिल्म साबित हुई। फिल्म के डायलॉग 'ये जख्म नहीं फूल हैं दुर्जन... और फूलों का मुरझाना बहार की रुसवाई है' या फिर 'ये वो तलवार है जिसने बड़े-बड़े शहंशाहों के गुरुर को तोड़ा है... ये मुहाफिज (रक्षक) आज भी अनारकली और उन तमाम मोहब्बत करने वालों की जिन्हें एक तंग-दिल शहंशाह की गुलामी मंजूर नहीं...' और गीतों ने पूरी दुनिया में धूम मचा दी।

इस फिल्म के साथ हुए जमकर प्रयोग

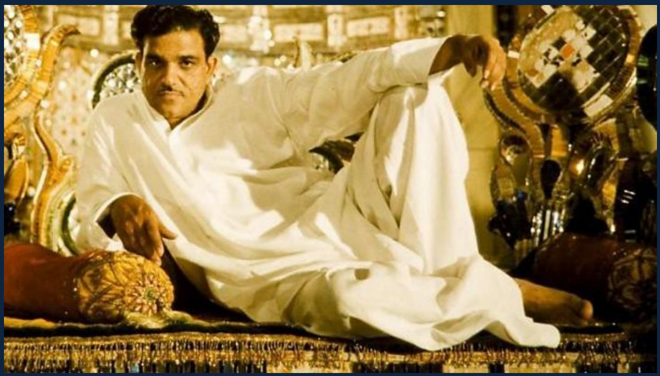

मुग़ल-ए-आज़म' ब्लैक एंड वाइट फिल्म थी लेकिन ‘प्यार किया तो डरना क्या’ और ‘जब रात है ऐसी मतवाली’ ये दोनों गाने रंगीन फिल्माए गए। फिल्म का आखिरी सीन भी रंगीन रखा गया था। फिल्म इतनी बड़ी हिट होगी इसका अंदाज़ा किसी को नहीं था। देश के कई सिनेमाघरों में ये फिल्म लगातार कई वर्षों तक चलती रही। अखबारों में फिल्म को लेकर दर्शकों के दिलचस्प इंटरव्यू भी छपते थे। कोई कहता कि मैंने फिल्म सौ बार देखी है तो कोई कहता था दो सौ बार देखी है।

फिल्म की रिलीज के छः महीने बाद इसमें दो गाने और बढ़ाए गए (उस जमाने में भी पैसा कमाने के नए-नए तरीके खोज ही लिए जाते थे) 'हमें काश तुमसे मोहब्बत न होती' (लता) और 'ये सब दुनियावाले बेकार की बातें करते हैं' (लता) गानों को फिल्म में जोड़ा गया और इस तरह फिल्म 25 रीलों तक पहुंच गई। दो गानों को जोड़ने का नतीजा ये हुआ कि 'मुग़ल-ए-आज़म' के दीवानों ने इसे फिर दो-दो और चार-चार बार देखा। 2004 में (रिलीज के 44 साल बाद) कंप्यूटर के जरिए पूरी फिल्म को रंगीन करके एक बार फिर रिलीज किया गया और उसी तरह लोगों ने उसे टूटकर देखा।

आज भी पृथ्वीराज कपूर का नाम आते ही लोगों को ये फिल्म याद आती है

अकबर के रोल में पृथ्वीराज कपूर की अदाकारी का जादू तो यहां तक पहुंच गया कि लोगों की कल्पना में अकबर का चेहरा पृथ्वीराज कपूर का चेहरा बन गया। 1960 के लिए बेहतरीन फिल्म का फिल्म फेयर अवार्ड 'मुग़ल-ए-आज़म' को मिला लेकिन के. आसिफ ने ये अवार्ड नहीं लिया, उनका कहना था कि जब ये बेहतरीन फिल्म है तो हर अवार्ड 'मुग़ल-ए-आज़म' को मिलना चाहिए था। 'मुग़ल-ए-आज़म' को फिल्म फेयर ने दो अवार्ड और दिए। बेहतरीन फोटोग्राफी के लिए आर.डी. माथुर को और बेहतरीन डायलॉग के लिए वजाहत मिर्ज़ा को, मधुबाला को अवार्ड न मिलना अभी तक लोगों को हैरत में डाल देता है।

के . आसिफ की 'मुग़ल-ए-आज़म' दिलीप कुमार और मधुबाला की एक साथ आखिरी फिल्म थी। इस फिल्म में मधुबाला ने अमर हो जाने वाला अनारकली का किरदार किया और अपनी अदायगी से पूरी फिल्म को बांधे रखा। मुगल दरबार की बदकिस्मत रक्कासा के इस किरदार को उन्होंनें बड़ी खूबसूरती से निभाया। लोगों की राय है कि शायद ऐसा इसिलए हो सका क्योंकि इस रक्कासा की जिंदगी की बहुत सी मुशकिलें खुद मधुबाला की जिंदगी से मिलती-जुलती थीं। यकीनन मधुबाला अपने इसी किरदार से आज तक हिंदुस्तान के दिल पर राज करती है।

प्यार किया तो डरना क्या

फिल्म 'मुगल-ए-आज़म' का गाना 'प्यार किया तो डरना क्या', जितना खूबसूरत यह गाना है,उतने ही खूबसूरत तरीके से शूट किया है। इस गाने में जब अनारकली की आवाज़ गूंजती है तो उसके पीछे भी एक राज़ है।

अनारकली बनीं मधुबाला इस गाने में बादशाह अकबर के सामने सलीम के लिए अपना प्यार बेबाक तरीके से जाहिर करती हैं। इस गाने को आवाज़ दी थी लता मंगेशकर ने। इस गाने में एक सीन ऐसा भी है जब अनारकली गाती हैं और शीश महल में जितने भी शीशे हैं, उसमें से हर एक शीशे में अनारकली नज़र आती है।

जहां एक तरफ़ अनारकली के प्यार के इकरार का जुनून दिखता है तो दूसरी तरफ बादशाह अकबर का गुस्सा भी ऊपर चढ़ता नज़र आ रहा है।

इस सीन को असरदार बनाती हैं, वो आवाज़ें जो गूंजती सुनाई देती हैं। कुछ लोग अटकल लगाते हैं कि ये गाना बाथरूम में रिकॉर्ड हुआ लेकिन ये बात सही नहीं।

सच क्या है, इसकी जानकारी लता मंगेशकर ने दी। लता मंगेशकर के मुताबिक, " (फ़िल्म) निर्देशक के. आसिफ़ ने मुझे महबूब स्टूडियो में बुलाया। उन्होंने गाने का वीडियो दिखाया। उस वीडियो को देख कर मैंने बार-बार गाया। ओवरलैप करने के लिए वहीं खड़े होकर गाया। उसके बाद वो मिक्स हुआ।" गाने में इको इफ़ेक्ट लाने के लिए ये तरीका आजमाया गया।

'मुग़ल-ए-आज़म' के असली शहंशाह थे के. आसिफ़

पचास के दशक में बनी फ़िल्म 'मुग़ल-ए-आज़म' को बनाने के लिए जिस पागलपन, कल्पनाशीलता और जीवटता की ज़रूरत थी, वो के. आसिफ़ में कूट-कूट कर भरी हुई थी।

हमेशा चुटकी से सिगरेट या सिगार की राख झाड़ने वाले करीमउद्दीन आसिफ़, अभिनेता नज़ीर के भतीजे थे। शुरू में नज़ीर ने उन्हें फ़िल्मों से जोड़ने की कोशिश की लेकिन आसिफ़ का वहाँ दिल न लगा।

नज़ीर ने उनके लिए दर्ज़ी की एक दुकान खुलवा दी। थोड़े दिनों में ही वो दुकान बंद करवानी पड़ी, क्योंकि ये देखा गया कि आसिफ़ का अधिकतर समय पड़ोस के एक दर्ज़ी की लड़की से रोमांस करने में बीत रहा था। नज़ीर ने तब उन्हें ज़बरदस्ती ठेल कर फ़िल्म निर्माण की तरफ़ दोबारा भेजा।

'मुग़ल-ए-आज़म' का जादू अब भी बरक़रार

के. आसिफ़ ने अपने जीवन में सिर्फ़ दो फ़िल्मों का निर्देशन किया, 1944 में आई 'फूल' और फिर 'मुग़ल-ए-आज़म,' लेकिन इसके बावजूद उनका नाम भारतीय फ़िल्म इतिहास में हमेशा स्वर्णाक्षरों में लिखा जाएगा। 'कमाल का 'विज़न' और 'पैशन' था आसिफ़ में सिर्फ़ दो फ़िल्म करने के बावजूद आसिफ़ को चोटी के निर्देशकों की क़तार में रखा जाता है।"

संवाद थे 'मुग़ल-ए-आज़म' की जान

यूँ तो 'मुग़ल-ए-आज़म' का हर पक्ष मज़बूत है, लेकिन इस फ़िल्म को दर्शकों के बीच लोकप्रिय बनाने में बहुत बड़ी भूमिका निभाई थी इसके संवादों ने। यासिर अब्बासी बताते हैं कि अनारकली को ज़िंदा चुनवाए जाने से पहले का दृश्य था, जिसमें अकबर उनसे उनकी आख़िरी इच्छा पूछते हैं और वो कहती हैं कि वो एक दिन के लिए भारत की मलिका-ए-आज़म बनना चाहती हैं।

"आसिफ़ ने अपने तीनों संवाद लेखकों से पूछा कि इस पर अनारकली को क्या कहना चाहिए। अमानउल्लाह साहब जो कि ज़ीनत अमान के पिता थे और एहसान रिज़वी ने अपने लिखे डायलॉग सुनाए। इसके बाद आसिफ़ साहब ने वजाहत मिर्ज़ा की तरफ़ देखा।"

"वजाहत मिर्ज़ा ने अपने मुंह से पान की पीक उगालदान में डाल कर कहा, 'ये सब 'डायलॉग' बकवास हैं। इतने शब्दों की ज़रूरत क्या है?"

"उन्होंने फिर अपने पानदान से एक पर्चा निकाल कर पढ़ा, अनारकली सिर्फ़ सलाम करेगी और सिर्फ़ ये कहेगी कि 'शहंशाह की इन बेहिसाब बख़्शीशों के बदले में ये कनीज़ जलालउद्दीन मोहम्मद अकबर को अपना ये ख़ून माफ़ करती है।"

"मिर्ज़ा का ये कहना था कि आसिफ़ ने दौड़ कर उन्हें गले लगा लिया और वहाँ मौजूद दोनों डायलॉग लेखकों ने अपने कागज़ फाड़ कर फेंक दिए।"

लच्छू महाराज ने सिखाया मधुबाला को कथक

जब 'मोहे पनघट पे नंदलाल छेड़ गयो' गाना फ़िल्माया जा रहा था तो पहले आसिफ़ और फिर नृत्य निर्देशक लच्छू महाराज नौशाद के पास आ कर बोले, "नौशाद साहब ये गाना ऐसा बनाएं कि वाजिद अली शाह के दरबार के ज़माने की ठुमरी और दादरा याद आ जाए।"

"नौशाद ने कहा कि कथक नृत्य में चेहरे और हाथ के भाव सबसे महत्वपूर्ण होते हैं। इसे फ़िल्म में मधुबाला पर फ़िल्माया जाएगा, लेकिन क्या वो

इसके साथ न्याय कर पाएंगी, क्योंकि वो कत्थक नृत्यागना तो हैं नहीं?"

"लच्छू महाराज ने कहा, ये आप मेरे ऊपर छोड़ दीजिए। उन्होंने शूटिंग से पहले मधुबाला से नृत्य का घंटों अभ्यास कराया। पूरा गाना उन पर फ़िल्माया गया और किसी 'डुप्लीकेट' का इस्तेमाल नहीं किया गया।"

भुट्टो रोज़ आते थे मुग़ल-ए-आज़म की शूटिंग देखने

दिलचस्प बात ये है कि इस गाने की शूटिंग देखने कई बड़े लोग सेट पर पहुंचते थे। चीन के प्रधानमंत्री चाऊ एन लाई, मशहूर शायर फ़ैज़ अहमद फ़ैज़ और बाद में पाकिस्तान के प्रधानमंत्री ज़ुल्फ़िकार अली भुट्टो ने मुग़ल-ए-आज़म की शूटिंग देखी।

यासिर अब्बासी बताते हैं, "उस ज़माने में भुट्टो मुंबई में ही रहा करते थे। इस गाने की शूटिंग जितने दिन चली, वो रोज़ आए शूटिंग देखते। भुट्टो और आसिफ़ में गहरी दोस्ती थी। वो जब भी सेट पर होते थे, आसिफ़ साहब और सेट पर मौजूद लोगों के साथ खाना खाते थे।"

"उस समय किसी ने कल्पना भी नहीं की थी कि 'मुग़ल-ए-आज़म' के सेट पर मौजूद रहने वाला ये शख़्स एक दिन पाकिस्तान का प्रधानमंत्री बनेगा।"

बेल्जियम से मंगाए गए थे शीशमहल के शीशे

इस फ़िल्म की जान थी के. आसिफ़ का 'अंटेशन टू डिटेल' यानी छोटी-छोटी चीज़ को ध्यान से देखने की कला। फ़िल्म में जोधाबाई द्वारा पहने गए कपड़ों को हैदराबाद के सालारजंग म्यूज़ियम से उधार लिया गया था। सेट के खंभे, दीवारें और मेहराब बनाने में महीनों लग गए थे।

ख़तीजा अकबर अपनी किताब 'द स्टोरी ऑफ़ मधुबाला' में लिखती हैं, "शीश महल का सेट बनने में पूरे दो साल लग गए। आसिफ़ को इसकी प्रेरणा जयपुर के आमेर के क़िले में बने शीशमहल से मिली थी। उस समय भारत में उपलब्ध रंगीन शीशों की गुणवत्ता उतनी अच्छी नहीं थी।

"उन शीशों को बहुत ज़्यादा क़ीमत चुका कर बेल्जियम से मंगवाया गया। इससे पहले ईद आ गई। रसम का पालन करते हुए 'मुग़ल-ए-आज़म' के फ़ाइनांसर शाहपूरजी मिस्त्री आसिफ़ के घर पर ईदी लेकर पहुंचे।"

"वो एक चाँदी की ट्रे पर कुछ सोने के सिक्के और एक लाख रुपये ले कर गए। आसिफ़ ने पैसे उठाए और मिस्त्री को वापस करते हुए कहा, 'इन पैसों का इस्तेमाल, मेरे लिए बेल्जियम से शीशे मंगवाने के लिए करिए।"

कैसे रचा गया था 'प्यार किया तो डरना क्या' गीत

'मुग़ल-ए-आज़म' फ़िल्म का सबसे मशहूर गाना था, 'प्यार किया तो डरना क्या...', इसको लिखने और संगीत में ढालने में नौशाद और शकील बदायूंनी को पूरी रात लग गई।

यासिर अब्बासी बताते हैं, "जब आसिफ़ ने नौशाद को उस गाने की 'सिचयुएशन' बताई तो उस ज़माने में एक और फ़िल्म बन रही थी अनारकली, जो इसी तरह की कहानी पर आधारित थी। नौशाद ने उनसे कहा कि दोनों फ़िल्मों में बहुत समानता है। उनका गाना रिकॉर्ड हो चुका है जिसे मैंने सुना भी है।"

"अगर हम भी उसी तरह का गाना चुनेगें तो ये 'रिपीटेशन' लगेगा। आप इस 'सिचयुएशन' को बदल क्यों नहीं देते। आसिफ़ साहब ने कहा कि हम ऐसा नहीं करेंगे। मैंने ये चुनौती स्वीकार कर ली है। अब आप की बारी है इस पर खरा उतरने की। जब इसे संगीत में ढालने की बारी आई तो सबसे मुश्किल काम था इसे लिखना।"

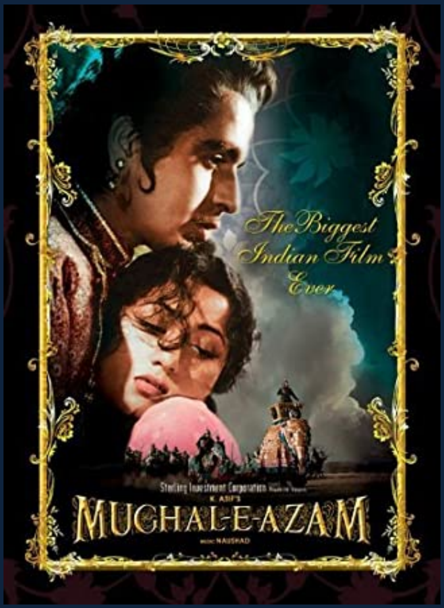

"शाम को छह बजे जब सूरज ढ़ल रहा था नौशाद और शकील बदायूंनी ने अपने आप को एक कमरे में बंद कर लिया। शकील साहब ने क़रीब एक दर्जन मुखड़े लिखे, जिसमें कभी उन्होंने गीत का सहारा लिया तो कभी ग़ज़ल का लेकिन बात बनी नहीं। कुछ देर में नौशाद का पूरा कमरा काग़ज़ की चिटों से भर गया।"

"उन्होंने पूरी रात न कुछ खाया और न ही पिया। काफ़ी देर बाद नौशाद को एक पूर्बी गीत का मुखड़ा याद आया जो उन्होंने अपने बचपन में सुना था, 'प्रेम किया का

चोरी करी।' मैंने शकील साहब को ये सुनाया। उन्हें ये पसंद आया, मैंने हारमोनियम पर इसकी धुन बनाई और शकील साहब ने उसी वक़्त लिखा -

प्यार किया तो डरना क्या
प्यार किया कोई चोरी नहीं की..."

"जब हम सुबह ये गाना 'कंपोज़' कर बाहर निकले तो हमारे सिर पर सूरज चमक रहा था। मुझसे अक्सर पूछा जाता है कि पुराने गानों की लोकप्रियता का राज़ क्या है? मेरा जवाब होता है कि उनको बनाने में पूरी-पूरी रात बीत जाती थी, जब जा कर उन्हें अंतिम रूप मिलता था।"

बड़े ग़ुलाम अली ख़ाँ ने लिए थे गाने के लिए 25000 रुपये

एक दिन आसिफ़ ने नौशाद से कहा कि वो स्क्रीन पर तानसेन को गाते हुए दिखाना चाहते हैं। सवाल उठा कि इसे गाएगा कौन? नौशाद ने कहा कि इसे इस समय के तानसेन बड़े ग़ुलाम अली ख़ाँ से गवाना चाहिए, लेकिन वो इसके लिए तैयार नहीं होंगें।

यासिर अब्बासी बताते हैं, "आसिफ़ ने कहा ये आप मेरे ऊपर छोड़ दीजिए। आप बस उनसे मिलने का वक़्त तय कीजिए। जब ये दोनों ख़ान साहब से मिलने गए तो उन्होंने ये कहते हुए गाने से इनकार कर दिया कि फ़िल्मों में गायकों पर बहुत बंदिशें लगा दी जाती हैं।"

"आसिफ़ साहब ने कहा कि ख़ाँ साहब ये गाना तो आप ही गाएंगे। ये सुनकर बड़े ग़ुलाम अली ख़ाँ ने नौशाद को एक तरफ़ ले जा कर कहा, आप किसको मेरे पास ले आए हैं? मेरे मना करने पर भी ये कह रहा है कि गाना आप ही गाएंगे। मैं इस शख़्स से अपने गाने की इतनी तगड़ी फ़ीस मांगूँगा कि ये यहाँ से भाग खड़ा होगा।"

"बड़े ग़ुलाम अली ने आसिफ़ से पूछा, आप मुझे कितने पैसे देंगे? आसिफ़ ने कहा, 'जो आप चाहें,' ख़ाँ साहब ने जवाब दिया, 'पच्चीस हज़ार रुपये' आसिफ़ बोले, 'सिर्फ़ पच्चीस हज़ार?' आप तो इससे कहीं ज़्यादा के हक़दार हैं।"

"बड़े ग़ुलाम अली ख़ाँ इस तरह 'मुग़ल-ए-आज़म' के लिए पच्चीस हज़ार रुपये पर गाने के लिए राज़ी हुए जबकि उस समय के चोटी के गायकों लता मंगेशकर और मोहम्मद रफ़ी को एक गाने के लिए सिर्फ़ 500 से 1000 रुपये ही मिलते थे।"

बड़े ग़ुलाम अली ख़ाँ साहब ने 'मुग़ल-ए-आज़म' फ़िल्म का वो मशहूर गाना गाया ....'प्रेम जोगण बनके... सुन्दर पिया ओर चले।'

मधुबाला के पिता को रमी में उलझाया के आसिफ़ ने

आसिफ़ की मुश्किल ये होती थी कि मधुबाला के पिता अताउल्लाह ख़ाँ अक्सर फ़िल्म की शूटिंग के दौरान सेट पर मौजूद रहते थे, लेकिन उन्होंने उनसे अपना पिंड छुड़ाने का नायाब तरीक़ा ढ़ूढ़ निकाला।

मशहूर फ़िल्म इतिहासकार बनी रयूबेन अपनी किताब 'फॉलीवुड फ़्लैशबैक-अ कलेक्शन ऑफ़ मूवी मेमॉएर्स' में लिखते हैं, "जिस दिन दिलीप कुमार और मधुबाला के बीच अंतरंग प्रेम दृश्य फ़िल्माए जाने होते थे, आसिफ़ ने मधुबाला के पिता अताउल्लाह ख़ाँ को सेट से दूर रखने के लिए एक तरकीब निकाली।"

"आसिफ़ को पता था कि अताउल्लाह ख़ाँ रमी खेलने के बहुत शौक़ीन थे, उन्होंने अपने पब्लिसिस्ट तारकनाथ गांधी को कुछ हज़ार रुपए दे कर कहा, आज से तुम्हारा काम, अगले कुछ दिनों तक ख़ाँ साहब के साथ रमी खेलना होगा और तुम जानबूझ कर हर बाज़ी हारोगे।"

के. आसिफ़ के पास अपनी कार भी नहीं थी

'मुग़ल-ए-आज़म' अपने ज़माने की सबसे मंहगी और सफल फ़िल्म थी, लेकिन इसके निर्देशक के. आसिफ़ ताउम्र एक किराए के घर में रहे और टैक्सी पर चले।

यासिर अब्बासी बताते हैं, "जब शाहपुरजी बहुत तंग आ गए तो उनसे एक बार नौशाद ने पूछा कि अगर आप को आसिफ़ से इतनी शिकायत है, तो आपने उनके साथ ये फ़िल्म बनाने का फ़ैसला क्यों किया? शाहपुरजी ने एक ठंडी सांस लेकर कहा कि नौशाद साहब एक बात बताऊँ, ये आदमी ईमानदार है।"

"इसने इस फ़िल्म में डेढ़ करोड़ रुपए ख़र्च कर दिए हैं, लेकिन उसने अपनी जेब में एक फूटी कौड़ी भी नहीं डाली है। बाक़ी सभी कलाकारों ने अपना कॉन्ट्रैक्ट कई बार बदलवाया, क्योंकि वक़्त गुज़रता जा रहा था। लेकिन इस शख़्स ने पुराने कॉन्ट्रैक्ट पर काम किया और कोई धोखाधड़ी नहीं की।"

"कोई पैसे का ग़बन नहीं किया। ये आदमी आज भी चटाई पर सोता है, टैक्सी पर छह आना हर मील का किराया देकर सफ़र करता है और सिगरेट भी दूसरों से मांग कर पीता है। ये आदमी बीस घंटे खड़े हो कर लगातार काम करता है और हम लोग हैरान रह जाते हैं।"

मधुबाला और दिलीप कुमार के बीच अनबन

अपनी आत्मकथा में दिलीप कुमार स्वीकार करते हैं कि वो मधुबाला की तरफ़ आकर्षित थे एक कलाकार के रूप में भी और एक औरत के रूप में भी। दिलीप कहते हैं कि मधुबाला बहुत ही जीवंत और फ़ुर्तीली महिला थीं, जिनमें मुझ जैसे शर्मीले और संकोची शख़्स से संवाद स्थापित करने में कोई दिक़्क़त नहीं होती थी। लेकिन मधुबाला के पिता के कारण यह प्रेम कथा बहुत दिनों तक नहीं चल पाई।

मधुबाला की छोटी बहन मधुर भूषण याद करती हैं, "अब्बा को यह लगता था कि दिलीप उनसे उम्र में बड़े हैं, हालांकि, वो मेड फ़ॉर ईच अदर थे। बहुत ख़ूबसूरत कपल था। लेकिन अब्बा कहते थे इसे रहने ही दो। यह सही रास्ता नहीं है लेकिन वह उनकी सुनती नहीं थीं और कहा करती थीं कि वह उन्हें प्यार करती हैं। लेकिन जब बी.आर. चोपड़ा के साथ 'नया दौर' पिक्चर को लेकर कोर्ट केस हो गया, तो मेरे वालिद और दिलीप साहब के बीच मनमुटाव हो गया।"

मधुर भूषण कहती हैं, "अदालत में उनके बीच समझौता भी हो गया। दिलीप साहब ने कहा कि चलो हम लोग शादी कर लें। इस पर मधुबाला ने कहा कि शादी मैं ज़रूर करूंगी लेकिन पहले आप मेरे पिता को 'सॉरी' बोल दीजिए लेकिन दिलीप कुमार ने ऐसा करने से इन्कार कर दिया। उन्होंने यहां तक कहा कि घर में ही उनके गले लग जाइए, लेकिन दिलीप कुमार इस पर भी नहीं माने। वहीं से इन दोनों के बीच ब्रेकअप हो गया।"

अनबन के बीच मोहब्बत का सीन

'मुग़ल-ए-आज़म' बनने के अंतिम चरण में मधुबाला और दिलीप कुमार के बीच बातचीत बंद हो गई थी, क्योंकि मधुबाला ने अपने परिवार के दबाव के चलते दिलीप कुमार का शादी का प्रस्ताव अस्वीकार कर दिया था।

'मुग़ले आज़म' का वह क्लासिक पंखों वाला रोमांटिक दृश्य तब फ़िल्माया गया था, जब मधुबाला और दिलीप कुमार ने एक दूसरे को सार्वजनिक रूप से पहचानना तक बंद कर दिया था।

फ़िल्म में दुर्जन सिंह का रोल करने वाले अजीत ने एक बार लिखा था, "एक सीन में दिलीप कुमार को मधुबाला को थप्पड़ मारना था। जब कैमरा रोल हुआ तो दिलीप कुमार ने मधुबाला को

इतनी ज़ोर से थप्पड़ मारा कि वहाँ मौजूद सारे लोग स्तब्ध रह गए। शॉट तो ओके हो गया लेकिन लोगों की समझ में नहीं आया कि अब आगे क्या होगा?"

"क्या मधुबाला सेट से वॉक-आउट कर जाएंगी? क्या शूटिंग रोकनी पड़ेगी? इससे पहले कि मधुबाला कुछ कहतीं, आसिफ़ उन्हें कोने में ले जा कर बोले, 'मैं आज बहुत ख़ुश हूँ, क्योंकि ये साफ़ है कि वो अभी भी तुम्हें प्यार करता है। एक आशिक़ के अलावा, कोई और अपनी माशूक़ा से ऐसा कैसे कर सकता है?"

सायरा बानो से दिलीप कुमार की शादी के बाद जब मधुबाला बहुत बीमार थीं, तो उन्होंने दिलीप कुमार को संदेश भिजवाया कि वह उनसे मिलना चाहती हैं। जब वह उनसे मिलने गए, तब तक वह बहुत कमज़ोर हो चुकी थीं। दिलीप कुमार को यह देखकर दुख हुआ। हमेशा हँसने वाली मधुबाला के होठों पर उस दिन बहुत कोशिश के बाद एक फीकी सी मुस्कान आ पाई।

मधुबाला ने उनकी आंखों में देखते हुए कहा, "हमारे शहज़ादे को आखिर उनकी शहज़ादी मिल गई, मैं बहुत ख़ुश हूं।"

23 फ़रवरी, 1969 को मात्र 35 साल की आयु में मधुबाला का निधन हो गया।

मुग़ल-ए-आज़म लागत और मुनाफ़े से ज़्यादा हौसले के लिए याद रखी जाने वाली फ़िल्म है

टेक्नॉलॉजी के उत्कर्ष में भी बॉलीवुड 'बाहुबली' या फिर 'बाजीराव मस्तानी' जैसी फ़िल्मों पर झूम उठता है, लेकिन तब यानी 1960 (और तब भी क्यों! आज़ादी के तीन साल पहले 'मुग़ल-ए-आज़म' बनना शुरू हो गयी थी) में ऐसी फ़िल्म बनाना किसी करिश्मे से कम नहीं था।

फ़साना क्या है?

फ़साना तो यह है कि बादशाह जलालुद्दीन अकबर औलाद की चाह में आगरा से चलकर ग़रीब नवाज़ मोइनुद्दीन चिश्ती की दरगाह पर जियारत करने अजमेर जाता है। सूफी की नज़रें इनायत होती हैं और अकबर की बेग़म को एक बेटा होता है जिसका नाम सलीम रखा जाता है। अकबर उसे प्यार से ग़रीब नवाज़ की रहमत मानते हुए शेखू कहकर बुलाता है, जिस बांदी ने अकबर को

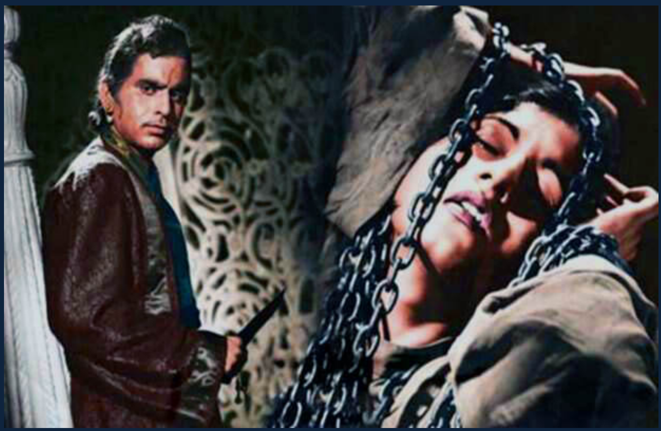

बच्चे के होने का पैगाम दिया था, उसे बादशाह सलामत अपने गले से मोतियों का हार बतौर शुकराना देते हैं और उससे कभी भी कोई ख्वाहिश मांगने को कह देते हैं, बांदी उस वक़्त तो हार से ही ख़ुश हो जाती है और कुछ नहीं मांगती। इसी बांदी की बेटी आगे चलकर अनारकली बनती है जिससे सलीम को मुहब्बत हो जाती है। अकबर को यह मुहब्बत नागवार है, सलीम को अकबर की बात नामंज़ूर है। अंजाम जंग तक आ जाता है। सलीम को कैद कर लिया जाता है और उसे एक ही बात पर माफ़ी मंज़ूर की जाती है कि वह अनारकली को भूल जाए।

उधर, अनारकली को बादशाह मौत की सज़ा की तौर पर जिंदा दीवार में चुनवा देने की बात करता है। अनारकली की मां अकबर से अधूरी ख्वाहिश को पूरा करने की मांग कर उठती है। अकबर अनारकली को छोड़ देता है और एक सौदे के तहत मां-बेटी को कहीं दूर गुमनामी की जिंदगी की ओर धकेल देता है, क़िस्सा इतना ही है।

फ़िल्म के बारे में

मुग़ल-ए-आज़म उस दौर की सबसे महंगी फिल्म थी। तकरीबन डेढ़ करोड़ रुपये ख़र्च हुए थे इस पर। दरअसल, के आसिफ़ दीवाने थे और उन्होंने फिल्म पर दीवानों की तरह पैसा लगाया था। सेट, कॉस्टयूम और सिनेमेटोग्राफी, सब एक से एक शानदार। जब आसिफ़ का बैंक अकाउंट ख़ाली हो गया तब किस्मत से रंगमंच के 'सिकंदर' पृथ्वीराज कपूर ने शापूरजी पालूनजी मिस्त्री समूह के मुखिया शापूरजी मिस्त्री को इसमें यह कहकर पैसा लगवाने के लिए राज़ी कर लिया कि फ़िल्म महज़ एक फिल्म नहीं बल्कि हिंदुस्तानी सिनेमा की शाहकार होगी। इसके बाद के आसिफ को फिर पैसे की क़िल्लत नहीं हुई, यानी 'सिकंदर' ने 'अकबर' पर दांव खेला था और बाज़ी सफल भी रही!

फिल्म बनने के दौरान

चूंकि इस फिल्म के बनने में काफ़ी समय लगा था तो कई दिलचस्प किस्से भी पैदा हो गए। अकबर के गेटअप में आने के लिए जब पृथ्वीराज कपूर मेकअप रूम में जाते तो खुद ही बोलने लगते, 'पृथ्वीराज कपूर जा रहा है,' जब अकबर बनकर निकलते तो आवाज़ लगती, 'अकबर आ रहा है।'

दिलीप कुमार और आसिफ़ साहब में झगड़ा

फिल्म के रिलीज़ होने से कुछ पहले दिलीप साहब और आसिफ़ साहब में झगड़ा हो गया था। दरअसल, आसिफ़ साहब की बेग़म

दिलीप को मानती थीं। मियां-बीवी के झगड़े को निपटाने एक बार दिलीप साहब उनके घर चले गए। बताते हैं कि आसिफ साहब ने यह कहकर दिलीप कुमार को रोक दिया कि वे अपने स्टारडम को उनके घर में न लायें। इससे दिलीप कुमार इतने आहत हुए कि फिल्म के रिलीज़ होने पर उसे देखने भी नहीं गए, उन्होंने इसे तकरीबन 19 साल बाद देखा।

फिल्म के बॉक्स ऑफ़िस आंकड़े

'मुग़ल-ए-आज़म' पांच अगस्त 1960 को देशभर के कुल 150 सिनेमाघरों में रिलीज़ हुई थी। मुंबई का मराठा मंदिर भी इनमें से एक था। टिकटों पर पहली बार फिल्म के पोस्टर की कॉपी छापी गई। ज़बरदस्त ओपनिंग मिली थी फिल्म को, 'मुग़ल-ए-आज़म' ने कुल मिलाकर पांच से छह करोड़ का व्यवसाय किया था, यानी फिल्म सुपर-डुपर हिट थी।

वह उत्तर प्रदेश के इटावा में पैदा हुए थे। महज आठवीं जमात तक पढ़े थे। पैदाइश से जवानी तक का वक्त गरीबी में गुजारा था। फिर उन्होंने भारतीय सिनेमा के इतिहास की सबसे बड़ी, भव्य और सफल फिल्म का निर्माण किया। यह इसलिए मुमकिन हुआ, क्योंकि उन्हें सिर्फ इतना पता था कि उनकी फिल्म के लिए क्या अच्छा है और क्या बुरा।

हम बात कर रहे हैं फिल्म इंडस्ट्री के महान डायरेक्टर्स में से एक करीमुद्दीन आसिफ की, जिन्हें लोग के. आसिफ के नाम से जानते हैं और वह फिल्म थी 'मुगल-ए-आजम'।

आसिफ का जन्म 14 जून, 1922 को हुआ था और 9 मार्च, 1971 को वह इस दुनिया से रुख्सत हो गए। इस मौके पर हम बता रहे हैं 'मुगल-ए-आजम' से जुड़े कुछ किस्से और फिल्म निर्माण को लेकर के. आसिफ का नजरिया, नोश फरमाइए।

'मुगल-ए-आजम' का प्रीमियर

ये महान फिल्म 5 अगस्त, 1960 को रिलीज हुई थी। इसके प्रीमियर के लिए बंबई के मराठा मंदिर को दुल्हन की तरह सजाया गया था और आसिफ खुद मेहमानों का स्वागत कर रहे थे। प्रीमियर में ओमप्रकाश, मुकरी, शम्मी कपूर, गीता बाली, नादिरा, राजेंद्र कुमार, सुरैया, शोभना समर्थ, वहीदा रहमान, गुरुदत्त, देवानंद, बिमल रॉय, जय किशन, लता मंगेशकर, माला सिन्हा, मीना कुमारी, कमाल अमरोही और जॉय मुखर्जी जैसे दिग्गज आए थे। राज कपूर तो उसी दिन बर्लिन से लौटे थे। 19वीं शताब्दी के मशहूर पारसी नेता सर काउसजी जहांगीर पहली बार कोई भारतीय फिल्म देखने आए थे।

प्रीमियर देखकर किसी ने आसिफ से कहा कि फिल्म के डायलॉग बहुत ही कठिन उर्दू में हैं, लोगों को समझ नहीं आएंगे। आसिफ ने जवाब दिया कि हर फिल्म की अपनी जुबान होती है। लोगों को समझना होगा, तो वो समझ लेंगे।

ये किस्सा सुनाते हुए समीक्षक जय प्रकाश चौकसे बताते हैं कि फिल्म के एक सीन में अकबर 'यलगार हो' बोलते हैं और सेना लड़ने के लिए दौड़ पड़ती है। ये शब्द इतना प्रचलित हुआ कि बाद में गुजरात तक में लोग इसका इस्तेमाल करते सुने गए।

बताते हैं कि के. आसिफ को इस फिल्म का आइडिया 1944 में आया था। वो तब से इस पर काम कर रहे थे, लेकिन शूटिंग जैसे बड़े काम शुरू हुए 1950 के बाद, इतने लंबे समय तक एक ही प्रॉजेक्ट से जुड़े रहना मुश्किल है। इस विकसित तकनीक के जमाने में भी 'बाहुबली' बनने में पांच साल का वक्त लगा। सबसे ज्यादा परेशानी तो प्रोड्यूसर को संभालने में आती है। आखिर कौन होगा, जो लगातार 16 सालों तक पैसे देता रहेगा। ये आसिफ की लगन ही थी, जिससे फिल्म तैयार हुई। और जो तैयार हुई, लोग आज भी उसके दीवाने हैं।

शूटिंग के समय जब आसिफ को कुछ कमजोर लगने लगता था (सेट से लेकर संवाद, अभिनय और प्रॉपर्टी तक), वो शूटिंग रोक देते। शीशमहल का सेट बनने की वजह से फिल्म दो साल रुकी रही, दिलीप कुमार के लिए सोने के जूते बनने और एक सीन के लिए मोती इकट्ठे करने के लिए भी फिल्म रुकी रही।

तो कहां से आए पैस्

इस फिल्म के प्रोड्यूसर थे शपूरजी पलौंजी मिस्त्री, जिन्हें सिनेमा बिल्कुल पसंद नहीं था, वो फिल्में नहीं देखते थे, लेकिन नाटक देखने के शौकीन थे और इसके लिए अक्सर ओपेरा हाउस जाया करते थे, जहां पृथ्वीराज कपूर के

नाटक होते थे। पृथ्वीराज के. आसिफ के साथ फिल्म 'फूल' में काम कर चुके थे। पृथ्वीराज आसिफ के हुनर से परिचित थे। तो उन्होंने ही शपूरजी से कहा, 'आपके पास बहुत पैसा है और आपके जैसा ही आसिफ जैसे पागल आदमी को फाइनेंस कर सकता है। पता नहीं कितने साल और कितना पैसा लगे, पर मैं इतना यकीन से कह सकता हूं कि वो फिल्म अभूतपूर्व बनाएगा।'

पृथ्वीराज के कहने पर शपूरजी फिल्म के फाइनेंसर बने और तब फिल्म को निर्बाध पैसा मिलना शुरू हुआ। वैसे शपूरजी के इंट्रेस्ट के पीछे एक कहानी ये भी है कि शपूरजी अकबर की शख्सियत के दीवाने थे। आसिफ तो सलीम-अनारकली की मोहब्बत के कायल थे, जिसकी वजह से उन्होंने फिल्म बनाना शुरू किया, लेकिन शपूरजी का इंट्रेस्ट अकबर की वजह से जगा था। हालांकि, शपूरजी फिल्म के इकलौते फाइनेंसर नहीं थे। आसिफ ने इन 16 सालों में जो भी कमाया, सब इसी फिल्म में लगा दिया।

शीशमहल का सेट

'मुगल-ए-आजम' का मकबूल गाना 'जब प्यार किया तो डरना क्या' शीशमहल में शूट किया गया था। पहले ये सेट साधारण शीशों को काटकर बनाया जा रहा था, लेकिन के. आसिफ को लगा कि इन शीशों से वह मन-मुताबिक आकर्षण पैदा नहीं कर पाएंगे, तो उन्होंने बेल्जियम से खास तरह के शीशे मंगवाए। मोहन स्टूडियो में बने इस 200 फीट लंबे, 80 फीट चौड़े और 35 फीट ऊंचे सेट में 10 लाख की लागत आई थी और बनने में 2 साल का वक्त लगा था, तब तक शूटिंग रुकी रही।

रोचक बात ये है कि फिल्म बनाने से पहले पूरी फिल्म का बजट ही 10 लाख रुपए का रखा गया था। उतना तो अकेले इस सेट में लग गया। पूरी फिल्म में करीब डेढ़ करोड़ रुपए का खर्च आया। शीशमहल का सेट बनने के बाद इसकी लाइटिंग करने में भी टेक्नीशियन्स को छींके आ गई थीं। विदेशी टेक्नीशियन्स तक ने हाथ खड़े कर दिए थे, फिर कैमरामैन आरडी माथुर की मदद से सेट की लाइटिंग मुमकिन हुई, वो टेक्निकल कहानी है।

सेट देखने विदेशों से आते थे मेहमान

'मुगल-ए-आजम' के सेट की खूबसूरती की इतनी चर्चा हुई कि देशभर से लोग इन्हें देखने आते थे। अहिस्ता-अहिस्ता बात जब देश के बाहर गई, तो कई विदेशी मेहमान भी सेट की भव्यता देखने भारत आए। इनमें अफगानिस्तान और सउदी अरब के शाही मेहमान, नेपाल के वजीर-ए-आजम, इटली के मशहूर डायरेक्टर रॉबर्तो रोज़ेलिनी और इंग्लैंड के बड़े फिल्ममेकर डेविड लीन शामिल हैं। चीन का कल्चरल डेलिगेशन भी सेट देखने आए थे और बेहद खुश हुआ।

सेट ही नहीं, फिल्म भी देखने आए

के. आसिफ ने ये फिल्म इतनी शानदार, बेमिसाल, लाजवाब बनाई थी कि लोग इसे देखने विदेशों से आते थे। हिंदुस्तानी तो इस कदर दीवाने हो गए थे कि टिकट की बिक्री से पहले दो-दो मील लंबी लाइनें लगाकर खड़े हो जाते थे। रजा मुराद बताते हैं कि कइयों ने तो सड़क पर बिस्तर ही डाल लिया था। वो फुटपाथ पर सोते थे और घरवालों से वहीं खाना मंगाते थे, ताकि टिकट लेकर फिल्म देख सकें।

मराठा मंदिर सिनेमाहॉल में दो टिकट विंडो होती थीं। एक भारतीयों के लिए और दूसरी उनके लिए, जिनके पास पासपोर्ट होते थे। यानी विदेशी पाकिस्तान से तो न जाने कितने लोग ये फिल्म देखने आए थे।

जहांगीर आर्ट गैलरी में प्रॉपर्टी देखने उमड़े थे लोग

'मुगल-ए-आजम' में इस्तेमाल हुआ एक-एक लिबास, जंगी कपड़े, ढालें, तलवारें और जेवर वगैरह पूरी जांच-पड़ताल के बाद ही तैयार किया गया था और वो किसी मायने में अकबरी जमाने से कमतर नहीं था। बंबई की जहांगीर आर्ट गैलरी में जब इस साजो-सामान की नुमाइश लगी, तो इसे देखने लोगों का हुजूम उमड़ पड़ा था।

इंडियन सिनेमा में ऐसे डायरेक्टर्स कम ही हुए हैं, जो फिल्म के हर हिस्से पर इतना ध्यान दें। सबसे बड़ी बात तो विजन है, न जाने कितने डायरेक्टर्स तरसते हैं कि वो 'मुगल-ए-आजम' की भव्यता का 100वां हिस्सा भी अपनी फिल्म में दिखा पाए। आसिफ सोच सकते थे और फिर उसे उतनी ही इंटेंसिटी से दिखा भी सकते थे.

मोतियों की बारिश के लिए मंगाए असली मोती

फिल्म के एक सीन बरसते मोती फिल्म में एक सीन है, जब सलीम 14 साल बाद वापस आते हैं। उनके स्वागत में महल में मोतियों की बारिश करवाई जाती है। पहले तो शूटिंग में आर्टीफीशियल मोती इस्तेमाल हुए, लेकिन वो जमीन से टकराते ही टूट जाते थे। मन-मुताबिक काम न होते देख आसिफ ने असली मोतियों की मांग की और जब तक हजारों मोती इकट्ठे नहीं हो

गए, शूटिंग रुकी रही। आसिफ कहते थे कि असली मोतियों के जमीन पर गिरने से जो खनक और खुशी मिलती है, उन्हें वही चाहिए और वो वही हासिल करके माने।

जब फिल्म की शूटिंग के लिए हटवाए गए खंभे

भारतीय सिनेमा के इतिहास में ऐसा शायद ही किसी फिल्म के लिए हुआ हो। फिल्म में सलीम के महल लौटने वाले सीन में एक रास्ता दिखाया गया है, जहां सलीम और उनके साथ सैकड़ों सैनिक महल की तरफ बढ़ते हैं। ये सीन राजस्थान के किसी भी पुराने इलाके में शूट किया जा सकता था, लेकिन आसिफ को वो रास्ता इतना पसंद आया कि उन्होंने वहीं शूटिंग करने का फैसला लिया। इसके लिए उन्होंने सरकार, नेताओं और अधिकारियों के साथ काफी मशक्कत की और आखिरकार उस रास्ते में लगे बिजली के सारे खंभे हटवा दिए गए।

जब नौशाद से बोले आसिफ, 'क्लासिक चाहिए'

'मुगल-ए-आजम' का म्यूजिक नौशाद ने कंपोज किया था। जब आसिफ 'मोहे पनघट पर नंदलाल छेड़ गयो रे' गाना लेकर नौशाद के पास गए, तो बस इतना बोले, 'क्लासिक होना चाहिए ये'। नौशाद ने जवाब किया, 'कोशिश करेंगे', नौशाद की कोशिश इतना रंग लाई कि आसिफ को कहना पड़ा, 'अहा! फर्स्ट क्लास,' जब आसिफ को गाना जंच गया, तो नौशाद ने उनसे कहा, 'इसमें कोई फिल्मी डांस मास्टर (कोरियोग्राफर) मत लीजिएगा।'

फिर इस गाने की कोरियोग्राफी के लिए नौशाद लच्छू महाराज को आसिफ के पास ले गए, गाना सुनकर लच्छू महाराज रोने लगे, तब आसिफ ने नौशाद को किनारे लेकर कहा, 'अमां वल्लाह ये क्या ड्रामा है। ये डांस का गाना है और ये बैठे रो रहे हैं'। इस पर नौशाद ने बताया, 'वाजिद अली शाह के दरबार में इनके बाप जो थे, ये आस्ताई उनकी थी। आस्ताई उनकी ली है मैंने,' इस पर आसिफ बच्चे की तरह खुश होकर बोले, 'अरे फिर तो क्लासिक है,' फिर लच्छू महाराज ने इस गाने पर मधुबाला को नचाया।

'अब आपका क्या होगा'

जब नौशाद ने 'मुगल-ए-आजम' बनानी शुरू की थी, तभी फिल्मिस्तान स्टूडियो ने 'अनारकली' नाम की एक फिल्म बनाकर रिलीज कर दी, फिल्म चल भी गई तो कुछ लोग आसिफ के पास आए

और बोले कि अब आपका क्या होगा। इस पर आसिफ ने बड़े आत्मविश्वास और गर्व से कहा, 'वो उनकी फिल्म है, मैं अपनी फिल्म अपने ढंग से बना रहा हूं।' इसके बाद क्या हुआ, सब जानते हैं।

आसिफ की ये बात उनका पूरा व्यक्तित्व बयां करती है। वो असल जिंदगी में इतने ही कॉन्फिडेंट थे, न तो उन्होंने बहुत पढ़ाई की थी और न फिल्म मेकिंग का कोई कोर्स। सिर्फ दो ही फिल्में हैं, जो वो पूरी बना पाए। उन्हें अपने काम और काम के लिए अपनी समझ पर भरोसा था। वो उन पैमानों से परे थे कि कोई बड़ा एक्टर है या कोई बड़ा डायरेक्टर है। उनके सामने सब बराबर थे। वो जितना सोचते थे, उसे वैसा ही दिखाने के लिए जी-जान एक कर देते थे। 'मुगल-ए-आजम' के निर्माण के दौरान न जाने कितनी ऐसी रातें गुजरीं, जब आसिफ मोहन स्टूडियो में चटाई पर सोए, वो फिल्म नहीं बनाते थे, तपस्या करते थे।

'मुगल-ए-आजम' के लिए छपे थे स्पेशल टिकट

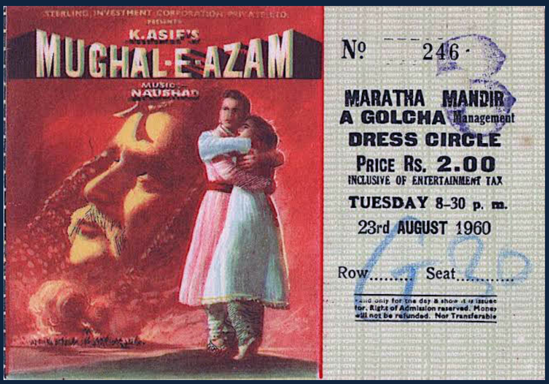

जब फिल्म सिनेमाहॉल में लगने की बारी आई, तो डिस्ट्रीब्यूटर मदन कोठारी ने आसिफ से कहा कि ये कोई ऑर्डिनरी फिल्म तो है नहीं, तो इसके टिकट भी साधारण नहीं होने चाहिए। आसिफ ने कहा, 'छपवा लीजिए' और आसिफ की मंजूरी के बाद ऐसे टिकट छपवाए गए, जिसमें फिल्म का पोस्टर भी था। ये टिकट मराठा मंदिर और मुंबई के कुछ दूसरे सिनेमाघरों में बेचे गए। तब इन्हें छापने की लागत 85 हजार आई थी, जो आज के वक्त में करीब 25 लाख होती।

आसिफ को अपने सामने देखने वाले लोग उनकी दो बातों का जिक्र हमेशा करते हैं। एक तो उनके पढ़े-लिखे न होने का और दूसरा उनकी सिगरेट पीने की अदा का, वो मुट्ठी बांधकर सिगरेट पीते थे, जैसे अक्सर रिक्शेवाले या चिलम पीने वाले पीते हैं। उनका शरीर बड़ा था, भारी-भरकम चौड़ी छाती और कंधों वाला, दिल भी उनका उतना ही बड़ा था। दो-ढाई सौ लोगों की यूनिट के साथ काम करते थे। उनके साथ काम करने वाला हर शख्स उनकी तारीफ करता था। महज 48 साल की उम्र में उनका निधन हो गया था।

मुग़ल-ए-आज़म के डायरेक्टर भी 'शहंशाह' से कम नहीं थे!

'मुग़ल-ए-आज़म'...! जिस तरह हिंदी सिनेमा की हस्ती को अज़ीम-ओ-शान तरीके से बयां करने के लिए ये एक फिल्म ही काफ़ी है, ठीक उसी तरह इस फिल्म के डायरेक्टर के. आसिफ़ की अपनी अलग ही शान थी।

ज़रा सोचिए, जो फिल्म 1944 में शुरू हुई और 5 अगस्त 1960 में रिलीज़ हुई, जिस फिल्म को बनने में करीब 16 साल लगे। कहानी, गाने, म्यूज़िक, डायलॉग, कैरेक्टर, सेट, लाइटिंग सब के सब बेमिसाल हैं। जहां इतना परफेक्शन हो, तो ज़रूर उसके पीछे डायरेक्टर का हद दर्ज़े का क्रियेटिव होना लाज़मी है। उसी क्रियेटिव शख़्सियत का नाम है के. आसिफ़. शायद कम लोग जानते होंगे कि के. आसिफ़ सेट पर समय से पहुंचने के बजाय थोड़ा देर में ही पहुंचते थे। इसके पीछे उनके करीबी लोग ये बताते हैं कि वो सब कुछ रेडी होने पर ही शॉट के लिए तैयार होते थे। वो चाहते थे कि जब वो सेट पर पहुंचें तो सारी चीज़ें तैयार मिलें। वो जाएं और डायरेक्शन शुरू कर दें। मगर, ऐसा कम ही हो पाता था, क्योंकि 'मुग़ल-ए-आज़म' जैसी फिल्म में दिन और रात के कई सीन नेचुरल लाइट में शूट किए गए हैं। इसकी वजह से दो मिनट के शॉट के लिए जिस तरह की प्राकृतिक लाइट की ज़रूरत होती थी, उसके लिए घंटों इंतज़ार करना पड़ता।

ब्रिटिश एशियाई साप्ताहिक अखबार 'ईस्टर्न आई' की ओर से कराए गए इस सर्वेक्षण में मधुबाला दिलीप कुमार स्टारर इस फिल्म ने निर्देशक रमेश सिप्पी की फिल्म 'शोले' को पछाड़ कर पहला स्थान हासिल किया।

निर्माता के. आसिफ के पुत्र अकबर आसिफ ने कहा, 'भारतीय सिनेमा के 100 वर्ष पूरे होने के समारोह में मेरे पिता की फिल्म 'मुग़ल-ए-आज़म' का हिन्दी सिनेमा की सर्वश्रेष्ठ कृति चुना जाना बहुत बड़ा सम्मान है और पूरे परिवार के लिए यह बड़े गर्व की बात है।' उन्होंने कहा, 'रिलीज के 50 वर्ष बाद भी पूरी दुनिया से इसे प्रेम मिल रहा है, जो दिखाता है कि इस अद्भुत फिल्म को बनाने के लिए मेरे पिता के. आसिफ ने जो अनगिनत बलिदान दिए हैं वह उपयुक्त थे।'